International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: IJRF 5.22
Received: 16-03-2020, Accepted: 15-04-2020, Accepted: 30-04-2020
www.socialsciencejournal.in
Volume 6, Issue 2, 2020; Page No. 96-98

प्रो. जे. के. मेहता के अर्थिक विचारः एक अध्ययन

डॉ. बलभद्र प्रसाद देवांगन[1], डॉ. पुष्पा देवांगन[2]
[1] प्राचार्य एवं विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, अशोका महाविद्यालय, रायगढ, छत्तीसगढ़, भारत
[2] प्राचार्य एवं विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, के. पी. महाविद्यालय, रायगढ़, छत्तीसगढ़, भारत

सारांश
प्रो. मेहता प्रथम भरतीय अर्थशास्त्री थे जिन्होने सिद्धांत के क्षेत्र में अर्थशास्त्र को एक नई परिभाषा, नवीन दृष्टिकोण तथा नया दर्शन प्रदान किया। यद्यपि इनकी अनेक पुस्तकों में प्रचलित आर्थिक विचार एवं सिद्धांतों की ही समीक्षा देखने को मिलती है, लेकिन प्रो. मेहता का मौलिक योगदान इनके द्वारा प्रतिपादित किए गए "आवश्कताओं के दर्शन" (Philosophy of wants) है, इसी दर्शन पर आधारित प्रो. मेहता ने अर्थशास्त्र की नई प्ररिभाषा प्रस्तुत किया हैं।

मूल शब्दः प्रो. मेहता, अर्थशास्त्र, "आवश्कताओं के दर्शन" (Philosophy of wants)

भारत में अर्थशास्त्र के अनेकोनेक विद्वानों के अपने सिद्धांत प्रस्तुत किये हैं। अर्थशास्त्र के विभिन्न क्षेत्रों में बहुत से अर्थशास्त्री हैं, जिन्होने उल्लेखनीय कार्य किये हैं, लेकिन सिद्धांतों के क्षेत्र में प्रो. जे.के. मेहता अग्रगण्य रहे हैं, इन्होने अर्थशास्त्र की प्रकृति तथा स्वभाव के संबंध में जो विचार रखे वे आदर के योग्य रहे हैं। मेहता जी ने न केवल अर्थशास्त्र पर विशुद्ध मौलिक चिंतन प्रस्तुत किया बल्कि एक स्वस्थ्य परंपरा का शुभारंभ किया जो भारतीय परिस्थितियों एवं आदर्शों के अनुकूल है। प्रो. मेहता की रचना की जिसमें से प्रमुख है :–

1. Studies in Advanced Economic Theory (1946).
2. Lectures of Modern Economic Theory (1959).
3. Foundation of Economic (1959).
4. Essays on Philosophical Foundation of Economic (1962).
5. Economic of Growth (1964).
6. Micro Economic (1969).
7. A Guide to Modern Economics (1970).
8. Economic Development : Principal & Problems (1971).

प्रो. मेहता प्रथम भारतीय अर्थशास्त्री थे जिन्होने सिद्धांत के क्षेत्र में अर्थशास्त्र को एक नई परिभाषा, नवीन दृष्टिकोण तथा नया दर्शन प्रचलित आर्थिक विचारों एवं सिद्धांतों की ही समीक्षा देखने को मिलती है, लेकिन प्रो. मेहता का मौलिक योगदान इनके द्वारा प्रतिपादित किए गए "आवश्कताओं के दर्शन" (Philosophy of wants) है, इसी नई परिभाषा प्रस्तुत की।

आवश्कताओं के दर्शन :– आवश्कताओं का दार्शनिक पक्ष प्रो. मेहता की विचारधारा का मूल आधार है। इनके सिद्धांतानुसार मनुष्य की आवश्कताओं और उन्हें संतुष्ट करने वाले साधनों के मध्य एक बहुत बड़ी खाई होती है, जिसके परिणामस्वरूप मानसिक असंतुलन उत्पन्न होता है। प्रो. मेहता ने असंतुलन संमाप्ति के दो उपाय बताए हैं।

प्रथम – आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयास किया जए और दूसरा तरीका यह है कि आवश्यकताऐं महसूस ही न हो, इसके लिए मस्तिष्क को शिक्षित करने की आवश्यकता है। प्रो. मेहता के अनुसार मनुष्य को चाहिए किवह अपनी आवश्यकताओं को कम करे। पहले उन आवश्यकताओं को त्याग दें, जिन्हें पूरा करने में वह असमर्थ है, इस प्रकार आवश्यकाताओं को अपनी साधनों की सीमा तक घटाया जाना चाहिए और अंतिम लक्ष्य आवश्यकता विहीनता की अवस्था होगी, जिस तक धीरे–धीरे पंहुचने का प्रयास करना होगा।

प्रो. मेहता के अनुसार इस बात से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि जिसकी सभी आवश्यकताऐं पूर्ण हो गई है, वह सुखी है और जिसकी आवश्यकताऐं अपूर्ण है, उसको मानसिका पीड़ा है, जिससे वह मुक्ति पाना चाहता है और इस पीड़ा से मुक्ति के लिए आवश्यक है कि आवश्यकताओं को कम करते हुए आवश्यकता विहीनता की स्थिति को प्राप्त किया जाए।

उदाहरण कि लिए ए और बी दो व्यक्ति है। ए की कुल आवश्कताऐं 100 है, जिनमें से 50 संतुष्ट हैं, तो उसकी आनंद या सुख की उपलब्धि 50 प्रतिशत होगी और यदि व्यक्ति की कुल आवश्यकताऐं 10 है, जिनमें से संतुष्ट है, तो उसकी आनंद उपलब्धि 80 प्रतिशत होगी, जो पहले व्यक्ति से अधिक है। स्पष्ट है कि जिस व्यक्ति की कम आवश्यकताऐं है, वह उतना ही सुखी है और जिसकी आवश्यकताऐं जितनी ही व्यापक तथा असंतुष्ट है वह उताना ही पीड़ित है।

सिद्धांत की आलोचना :– यद्यपि दर्शन व नीतिशास्त्र के दृष्टिकोण से प्रो. मेहता के विचार अनुकूल प्रतीत होते है, किन्तु फिर भी इस भौतिकवादी युग में प्रो.मेहता के इन सिद्धांत की आलोचना की गई जिसके अनुसार प्रो. मेहता के विचारों की काल्पनिकता पर आधारित बताया गया क्योंकि कोई व्यक्ति साधारणतया यह कभी नही सोचता कि सुख को प्राप्त करने के लिए उसे आवश्यकताओं को कमा करना चाहिए। जो व्यक्ति आवश्यकता विहीनता की स्थिति का प्राप्त करने का प्रयास करतप है, उसे इस युग में काल्पनिक य समाज के बाहर रहने वाला माना जाता है। मेहता जी के सिद्धांत में आवश्यकता व इच्छा में भेद नहीं किया गया, जो ठीक नहीं है, क्योकि आवश्यकता इच्छा का भाग नहीं है। उदाहरणार्थ – एक व्यक्ति के लिए (जो बीमार है) औषधि आवश्यकता है भले ही उसकी इच्छा न हो और पूर्ति का साधन भी न हो।

अतः हम कह सकते है कि आदर्श "आवश्यकता शुन्यता" नहीं बल्कि आवश्यकता न्यूनता एवं कामना रहित होना है। अर्थात् सही स्थिति यह होगी कि सभी चीजों की इच्छा से छुटकारा पाने की बजाय आसक्ति त्याग दी जाए और विलासिता को त्यागा जाए और सादा जीवन उच्च विचार जैसे आदर्शों को प्राथमिकता दी जाए।

प्रो. मेहता ने अर्थशास्त्र के विभिन्न क्षेत्रों के संबंध में भी अपने विचार प्रस्तुत किए जिनमें प्रमुख है–

अर्थशास्त्र की परिभाषा

प्रो. मेहता ने अर्थशास्त्र को नया दृष्टिकोण देने का प्रयास किया है, जो कि पाश्चात्य देशों के अर्थशास्यियों से भिन्न और भारतीय संस्कृति के अनुकूल है, जिसमें सदैव से ही मनुष्य को अपनी आवश्यकताओं और इच्छाओं को कम करने का उपदेश दिया गया है। प्रो. मेहता ने इच्छओं से मुक्ति पाने की समस्या को ही "आर्थिक समस्या" बतलाया है। चूंकि आवश्यकताओं को कम करने से ही सुख की प्राप्ति होती है, इससिए प्रो. मेहता ने अर्थशास्त्र की परिभाषा इस प्रकार है दी है –

"अर्थशास्त्र वह विज्ञान है, जो मानवीय आचरण क इच्छारहित अवस्था में पंहुचाने के लिए साधन के रू‍प में अध्ययन करता है।"

स्पष्ट है कि मानव व्यवहार जो कि अर्थशास्त्र के अध्ययन का विषय है, मस्तिष्क की बेचैनी या असंतुलन की दशा का परिणाम देता है। अर्थशास्त्र व्यक्ति को सुखी बनाने के लए, आवश्यकता विहीनता की स्थिति तक पंहुचाने के साधन का का कार्य करता है।

आलोचना :– अर्थशास्त्र की परिभाष के संबंध में प्रो. मेहता के विचारों की इस आधार पर आलोचना की जाती है, कि यदि इस दृष्टिकोण को मान लिया जाए तो अर्थशास्त्र का अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा क्योंकि अगर हर व्यक्ति आवश्यकता विहीनता की स्थिति को प्राप्त करने का प्रयास करे तो कोई आर्थिक क्रिया ही नहीं होगी तो अर्थशास्त्र का अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। इसके अलावा प्रो. मेहता ने अर्थशास्त्र को केवल आदर्श विज्ञान माना है, जो उचित नहीं है क्योंकि अर्थशास्त्र आदर्श विज्ञान होने के साथ–साथ वास्तिविक विज्ञान भी है।

लेकिन ये आलोचनाएं भी पूर्णतया उचित नहीं है, क्योंकि आदर्श और वास्तविकाता दोनों ही मानव जीवन का एक अंग है, जिन्हे अलग–गलग नहीं किया जा सकता, किंचित आदर्श ही सुखी वास्तविक जीवन का आधार होते हैं। इसके अलावा आवश्यकता विहीनता का तात्पर्य यह नहीं है, कि व्यक्ति की सभी आवश्यकताएं सताप्त हो जाए, क्योंकि जीवन की निरंतरता को बनाए रखने के लिए कुछ न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति आवश्यक होगी अर्थात् आर्थिक क्रियाएं भी निरंतर चलती रहेगी, जिससे अर्थशास्त्र का अस्तित्व समाप्त नहीं होगा।

प्रतिनिधि फर्म संबंधी विचार :– प्रो. जे.के. मेहता ने प्रतिनिधी फर्म की धारणा को एक नया अर्थ प्रदान किया उन्होने इस संबंध में बताया कि –

- प्रतिनिधी फर्म का विचार प्रावैगिक अवस्था में लागु होता है।
- यह मार्शल की प्रतिनिधी फर्म की भांति सदैव साम्य में नहीं रहती है।

प्रो. मेहता के अनुसार – "प्रतिनिधी फर्म वह फर्म है, जो उद्योग के साथ–साथ उसी प्रकार का संकुचन अथवा विस्तार करने की प्रवृत्ति दिखलाती है।"

व्याख्या :– प्रावैगिक साम्य अवस्था में कोई भी उद्योग विभिन्न कारणों से घट बढ़ सकता है, जबकि उद्योग की प्रवृत्ति बढ़ने की होती है, तो उद्योग में साधनों का प्रवाह बढ़ जाता है नई–नई फर्मे उद्योग में प्रवेश करती है, तथा पुरानी फर्मो के उद्योग से निकलने की गति धीमी पड़ जाती है। इसके विपरीत जब उद्योग की प्रवृत्ति संकुचन की ओर होती है तो उद्योग में साधनों का प्रवाह कम हो जाता है और वे शक्तियाँ अधिक क्रियाशील हो जाती है जो फर्मो को उद्योग से बाहर निकल जाने के लिए बाध्य करती है, ऐसे में बहुत सी फर्मे उद्योग से बाहर निकल जाती है तथा नई फर्मो के प्रवेश की गति बहुत धीमी पड़ जाती है। इस प्रकर प्रावैगिक अवस्था में उद्योग का चाहे विस्तार हो रहा हो या संकुचन, बहुत सी फर्मे उद्येग में प्रवेश करती है। तथा बहुत से उद्योग को छोडती रहती है। परंतु इन परिस्थितियों में ऐसी फर्मे भी होती हैं जो सदैव संपूर्ण उद्योग की प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करती है अर्थात् जब उद्योग का विस्तार हो रहा हो उस फर्म का स्वयं भी विस्तार हो और जब उद्योग संकुचन हो रहा हो साथ–साथ उसका भी संकुचन हो रहा हो। ऐसी ही फर्म को जो उद्योग की सामान्य प्रवृत्ति की द्योतक है। हम प्रतिनिधि फर्म कह सकतें है।

प्रतिनिधि फर्म ही उद्योग में फर्मो के प्रवेश करने तथा निकलने के निर्णय का आधार बनती है और सामान्य मुल्य इसी फर्म की लागत के द्वारा निर्धारित होता है। जब प्रतितिधि फर्म विस्तार कर रही होती है तो नई फर्मे उद्योग मे प्रवेश करती है और जब प्रतिनिधि फर्म संकुचन होता हो तो नई फर्म उद्योग में बहुत कम ही प्रवेश करती है बल्कि कुछ पुरानी फर्मे उद्योग को छोड़ती है।

दीर्घ काल में मुल्य की प्रवृत्ति प्रतिनिधि फर्म की औसत लागत के बराबर होने की होती है यदि मुल्य प्रतिनिधि फर्म की औसत लागत से अधिक है तो उसे लाभ होगा जिससे नई फर्मे प्रवेश करेगी और पूर्ति बढ़ जायेगी जिसके परिणामस्वरूप मुल्य गिरेगा और प्रतितिधि फर्म के विस्तार की गति शिथित होने लगेगी और अंत में ऐसी स्थिति आ जायेगी जिससे प्रतितिधि फर्म की गति रूक जायेगी। यह स्थिति उस समय आयेगी जब मुल्य घटकर प्रतिनिधि फर्म की औसत लागत के बराबर हो जाता है यदि मुल्य प्रतिनिधि फर्म का संकुचन होगा तब नई फर्मो का उद्योग आना बंद हो जाएगा। हो सकता है कि पूराने फर्मे उद्याग छोड़ दें। फलतः पूर्ति घटेगी जिससे मुल्य बढ़ेगा यह मुल्य वृद्धि तब तक होगी जब तक मुल्य प्रतितिधि फर्म की औसत लागत के बराबर नही हो जाता। इस प्रकार परिवर्तनों के होते हुए भी मुल्य प्रतिनिधि फर्म की औसत लागत के बराबर रहता है।

बाजार संबंधी विचार

प्रो. मेहता ने बाजार की परिभाष इस प्रकार दी है – " बाजार एक स्थिति का परिचायक है, जिसमें एक वस्तु की मांग ऐसे स्थान पर होती है जहाँ उसे विक्रय के लिये प्रस्तुत किया जाता है।"

प्रो. मेहता की इस परिभाषा के अनुसार एक क्रेता एक विक्रेता भी बाजार का निर्माण करने के लिये प्रर्याप्त हो सकतें हैं, यदि उनमें क्रय विक्रय करने की सामर्थ्य हो। प्रो. मेहता के अनुसार बाजार शब्दा को परिभाषित करते समय इसके साथ क्षेत्र तथा प्रतिस्पर्धा विशेषणों को जोड़ना आवश्यक नहीं है।

आलोचना :– प्रो. मेहता द्वारा दी गई बाजार की इस परिभाषा में एक कमी यह है कि वे केवल वस्तुओं के क्रेता और विक्रेताओं की बात करतें है, सेवाओं के क्रेता एवं विक्रेताओं की नहीं।

राजस्व संबंधी विचार

प्रो. मेहता ने राजस्व एवं उसके सैद्धांतिक अंगों को एक नया दृष्टिकोण दिया। राजस्व के क्षेत्र के संबंध में उन्होने कहा है –" राजस्व में केवल राज्य के भौतिक तथा साख संबंधी साधनों को ही सम्मिलित करना चाहिए।"

प्रो. मेहता के अनुसार राष्ट्रीय आय को यथा संभव बढ़ाना ही राजस्व का अंतिम उद्देश्य होना चाहिए। उनका मानना है कि राष्ट्रीय आय में उन समस्त भौतिक तथा अभौतिक आय की गणना होनी चाहिए जो व्यक्ति को संतुष्टि देने की सामर्थ्य रखती हो। इस प्रकार राष्ट्रीय आय में प्राध्यापकों, वकीलों और डाक्टरों की मानवीय सेवाएं भी सम्मिलित करनी चाहिए। प्रो. मेहता का करारोपण का सिद्धांत तथा करों का विभाजन विकास संबद्ध है। उनका मत है कि कर सार्वजनिक आय के प्रमुख साधन है और उनका अर्धविकासित देशों के आर्थिक विकास में विशेष महत्व है।

इसी प्रकार प्रो. मेहता ने राजस्व के अन्य अंगों पर भी अपने तार्किक दृष्टिकोण से प्रकाश डाला है।

लाभ संबंधी विचार

प्रो. मेहता के अनुसार सहसोद्यमी ही (व्यवसाय का) स्वामी होता है या स्वामी ही साहसोद्यमी होता है, और यद्यपि उसे कभी कभी हानि उठानी पडती है, उसे अतिरेक प्राप्त होता है,क्योंकि अंततः स्वामी ही शेष आयों का अधिकारी है। लाभ की संभावना सदैव ही इतनी नहीं होती कि हानि की आशंका का संतुलन हो सके और इसलिये जोखिम उठाने में सदैव ही मानसिक शांति का थोड़ा बहुत बलिदान करना पड़ता है और बिना प्रतिफल पाये यह बलिदान करने को कोई प्रस्तुत नहीं होगा, इस लिये जोखिम उठाने के लिये भी कुछ भुगतान करना पड़ता है। क्योंकि केवल स्वामी ही व्यवसाय का जोखिम उठाता है। अतः उसे स्वयं ही उसका प्रतिफल मिलता है। स्पष्ट है कि जोखिम उठाने के लिये मिले इस प्रतिफल को लाभ कहते हैं। इस प्रकार यह भी मजदूरी और व्यज के ही तरह एक आवश्यक और निश्चित आय है। उन्ही की भांति उत्पादन की लागत के अंतर्गत है। "लाभ एक आवश्यक कार्य (जोखिम) के लिये मिला प्रतिफल है।"

अन्य आर्थिक विचार

प्रो. मेहता के कुछ अन्य आर्थिक विचार इस प्रकार है–

1. **उपभोक्ता की बचत :–** प्रो. मेहता ने उपभोक्ता की बचत को प्राप्त उपयोगिता और दिये गये मुल्य का अंतर न मानकर प्राप्त उपयोगिता और किये गये त्याग का अंतर माना है।

2. **उपयोगिता मापी जा सकती है** – कुछ विचारकों का मानना है कि उपयोगिता जैसी अमूर्त चीज की माप नहीं किया जा सकता है लेकिन प्रो. मेहता का मानना है कि गति, तापक्रम, लंबाई आदि भी अमूर्त चीज है परंतु जैसा इनका माप हो सकता है, उपयोगिता की भी माप हो सकती है फिर तुलना और माप एक ही चीज है। मुद्रा जब माप करती है तो तुलना ही करती है।
   इस विचार में संशोधन आवश्यक है क्योंकि माप करने में पैमाना स्थिर होता है किंतु तुलना का पैमाना अस्थिर ही होता है।
3. अर्थशास्त्र में कई सिद्धांत एवं विचार मेहता के प्रभाव कह कर भी प्रचलित है। जैसे :– उपभोग मे सिद्धांत में प्रो.मेहता का मौलिका विचार है कि पूरानी आवश्यकता ही भविष्य की आवश्यकता हो जाती है या नई आवश्यकताओं का सृजन होता है। नई आवश्यकता की प्राप्ति को मेहता प्रभाव कह कर संबोधित किया जाता है।

मेहता व राबिन्स के विचारों की तुलना

यद्यपि प्रो. मेहता ने भी रॉबिन्स की भांति मानवीय इच्छाओं के विश्लेषण और चुनाव संबधी क्रियाओं का अध्ययन किया है परंतु मेंहता और रार्बिन्स के विचारों में कुछ मूलभूत अंतर है जो कि इस प्रकार है –

रॉबिन्स आवश्यकताओं की वृद्धि लक्ष्य मानते है, जबकि प्रो. मेहता ने इस आवश्यकताओं को क्रमशः कम करने पर विशेष जोर दिया है। रॉबिन्स ने अर्थशास्त्र को एक वास्तविक पर तटस्थ विज्ञान मानकर उसे नीति–शास्त्र से दूर रखा है, परंतु प्रो. मेहता ने नैतिक विचारों को अर्थशास्त्र में समाविष्ट करते हुए और "सादा जीवन उच्च विचार" के आदर्शो को स्वीकार करके अर्थशास्त्र को एक आदर्श विज्ञान माना है।

रॉबिन्स का दृष्टिकोण अदूरदर्शी है क्योंकि वे अधिकतम संतुष्टि में विकास करते हुए उसे आवश्यकता की पूर्ति तक सीमित कर देते है, जबकि प्रो. मेहता का दृष्टिकोण दूरदर्शी माना जा सकता है, क्योंकि उनका कथन है कि मनुष्य को इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि वह पूर्ण मानसिक संतुलन की स्थिति (अर्थात् आवश्यकता विहीनता की स्थिति) के अंतिम लक्ष्य को प्राप्त करें।

मूल्यांकन :– प्रो. जे.के. मेहता के अनुसार अर्थशास्त्र का संबंध (अर्थात् आवश्यकता विहीनता की स्थिति) से है, किंतु यह लक्ष्य पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं किया जा सकता, इसके लिये आवश्यकता की न्यूनतम सीमा निर्धारित करना ही पर्याप्त होगा। प्रत्येक देश के लिए आवश्यकताओं की न्यनतम सीमा उस देश के आर्थिक विकास के स्तर पर आधारित होगी। जहाँ मार्शल और रॉबिन्स ने अधिकतम आवश्यकाताओं की संतुष्टि के द्वारा अधिकतम सेतोष प्राप्त करने की बात की है, वही प्रो. मेहता ने आवश्यकताओं में कमी करके अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने की नैतिकता युक्त आदर्श बात कही है।

यदि हम भरतीय आर्थिक व समाजिक परिस्थितियों के संदर्भ में प्रो. मेहता के विचारों का मूल्याकन करें तो स्पष्ट होता है कि आवश्यकताओं के न्यूनीकरण से ही विकास संभव है क्योंकि देश की बढ़तर जनसंख्या व व्यापाक निर्धनता को देखते हुए यह आवश्यक है कि आवश्यकताओं के न्युनीकरण किया जाये, यदि एक व्यक्ति ही अपनी आवश्यकताओं को अत्यधिक बढ़ा लेगा तो परिवार, समाज और देश की आवश्यकताएं कैसे पूर्ण हो सके गी और उपलब्ध साधनों से ज्यादा आवश्यकताएं मनुष्य को पतन की ओर ले जाती है और विकास में बाधक सिद्ध होती है।

निष्कर्ष

अंततः हम कह सकते है कि प्रो. मेहता के आर्थिक विचार नैतिकता से युक्त और भरतीय आर्थिक परिस्थितियों के सर्वथा अनुकूल है, क्योंकि यह आवश्यक है कि सीमित संसाधनों को ध्यान में रखतें हुए आवश्यकताओं को भी उचित स्तर तक सीमित किया जाए, क्योंकि यह वास्तविकता है कि जहां आवश्यकताएं एक ओर मनुष्य को आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है वही दूसी ओर असीमित आवश्यकताएं व्यक्ति को पतन की ओर ले जाती है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि आज हमारे सामने जो निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूर्ण करने की चुनौती है उसे हल करने के लिए हम प्रो. मेहता के सिद्धांत पर चलते हुए आवश्यकताओं के न्युनीकरण के द्वारा विकास पथ पर आगे बढ़ सकते है।

संदर्भ सूची

1. आर्थिक चिंतन का इतिहास – डॉ. चतुर्वेदी एवं चतुर्वेदी।
2. आर्थिक विचारों का इतिहास – डॉ. पंत एवं डॉ. सेठ।
3. आर्थिक विचारों का इतिहास – डॉ. वी.सी. सिन्हा।
4. आर्थिक विचारों का इतिहास – डॉ. टी.एन. हाजेला।
5. आर्थिक विचारों का इतिहास – डॉ. वैश्य एवं वैश्य।
6. व्यष्टि अर्थशास्त्र – डॉ. एस.एन. बंसल एवं डॉ. अनुपम अग्रवाल।